संपादक
डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल
डॉ. मीना अग्रवाल

ISSN 0975-735X

शोध दिशा

56

UGC APPROVED CARE LISTED JOURNAL

महिला सौंदर्यीकरण : महिलाओं के समक्ष उभरते प्रतिमान एवं चुनौतियाँ

डॉ॰ सुमित्रा शर्मा
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग,
मोहनलाल सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

सौंदर्य एवं सुंदरता वे शब्द हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को आकर्षित करते हैं, खुश करते हैं एवं जिनके द्वारा व्यक्ति को संतोष प्राप्त होता है। सौंदर्य शब्द केवल एक शब्द ही नहीं है, वरन् यह सामाजिक मनोवैज्ञानिक अवधारणा भी है। सौंदर्य के दो प्रमुख आयाम होते हैं, प्रथम आयाम प्राकृतिक और द्वितीय कृत्रिम। प्राकृतिक सौंदर्य प्रकृतिप्रदत्त है एवं कृत्रिम सौंदर्य में मानवीय हस्तक्षेप को शामिल किया जाता है। सौंदर्य केवल शरीर के साथ जुड़ी अवधारणा ही नहीं है वरन् वैयक्तिक सौंदर्य समाज में व्यक्ति की प्रस्थिति निर्धारण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब सौंदर्य की अवधारणा समाज में प्रस्थिति के साथ जुड़ जाती है, तब यह सामाजिक आधार पर समाज में व्यक्ति की प्रस्थिति निर्धारण में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। अत: सौंदर्य एक सामाजिक एवं समाजशास्त्रीय अवधारणा का रूप धारण कर लेता है। सौंदर्य को कई अर्थों में प्रयुक्त किया जा सकता है, लेकिन समाजशास्त्रीय संदर्भ में सौंदर्य समाज में सामाजिक स्तरीकरण का आधार बन जाता है। सौंदर्य के आधार पर समाज में उच्चता एवं निम्नता का श्रेणीकरण समाहित हो जाता है एवं इस आधार पर समाज में भेदभाव का व्यवहार किया जाता है। सौंदर्य वह प्रतिमान बन जाता है, जिसकी इच्छा समाज का प्रत्येक व्यक्ति रखता है, सौंदर्य को मानव देह के साथ में जोड़ दिया जाता है। लेकिन इस संदर्भ में समाज में स्त्री-सौंदर्य पुरुष-सौंदर्य से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। यहाँ लैंगिकता की अवधारणा कार्य करती है, अत: लैंगिकता के साथ जुड़कर सौंदर्य भी सामाजिक स्वरूप धारण कर लेता है। समाज में पुरुषों के साथ सौंदर्य की अवधारणा नहीं जुड़ती वरन् महिलाओं के साथ ही इस अवधारणा को विशेषत: जोड़ा जाता है। सुंदर स्त्री की अवधारणा के पैमाने समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं। अपेक्षा की जाती है कि महिलाएँ इन पैमानों पर खरी उतरेंगी। समाज द्वारा निर्धारित सौंदर्य के पैमाने स्त्री-सौंदर्य के साथ जुड़कर उसे एक पृथक अर्थ प्रदान करते हैं।

वर्तमान समाज उपभोग समाज है, जिसमें उपभोग एवं दिखावे की प्रवृत्ति बहुत तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। इस संदर्भ में समाज में एक प्रतिस्पर्द्धात्मक व्यवहार प्रतिमानों को स्पष्टत: देखा जा सकता है। पूँजीवाद उपभोग समाज के विस्तार का एक प्रमुख कारक है। पूँजीवाद भौतिकवादिता, विलासिता एवं उपभोग का पक्षधर है एवं इन प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने के लिए उपभोक्ताओं की मानसिकता को प्रभावित करने की कोशिश की जाती है। अधिक उत्पादन कर बाजार में माँग को पैदा किया जाता है। इसके लिए पूँजीवाद के दो प्रमुख उपकरण प्रिंट मीडिया एवं दृश्य मीडिया की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। इन साधनों द्वारा उपभोग के बाजार के विस्तार

को बढ़ावा दिया जाता है।

सौंदर्यीकरण की अवधारणा आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण एवं पूँजीवाद के प्रभावस्वरूप बहुत अधिक परिवर्तित हो गई है। वर्तमान में न केवल इस अवधारणा का विस्तार हुआ, वरन इसके प्रति बढ़ते अंधानुकरण व लालसा ने समाज में गैर-बराबरी को बढ़ावा देने में अहम भूमिका निभाई है। आधुनिकीकरण ने समाज में सौंदर्यीकरण के द्वारा होने वाले भेदभावों को बहुत अधिक बढ़ावा दिया है। महिलाओं के साथ सौंदर्यीकरण के प्रतिमान जो पहले से ही जुड़े हुए थे एवं उसके आधार पर महिलाओं को भेदभाव का सामना भी करना पड़ता था। लेकिन आधुनिक युग में वैश्वीकरण एवं पूँजीवाद के कारण सौंदर्यीकरण का बाजार बहुत अधिक विस्तृत हो रहा है जिससे यह भेदभाव और अधिक बढ़ता जा रहा है। सौंदर्य-उत्पादों की अधिकता एवं उनके उपयोग में लगातार वृद्धि होती जा रही है। महिलाएँ न केवल इन उत्पादों का प्रयोग करती हैं वरन ब्यूटी पार्लर जाकर भी अपने आपको प्राकृतिक सुंदरता से भी अधिक सुंदर बनाने की आकांक्षा रखती हैं। यह आकांक्षा सदैव नैसर्गिक हो यह आवश्यक नहीं, कभी-कभी इसमें सामाजिक दबाव भी कार्य करता है। अत: वर्तमान में महिलाओं में एक अलग तरह की प्रतिस्पर्धा उभर रही है, वह सौंदर्य की प्रतिस्पर्धा है। प्रत्येक महिला चाहती है कि वह सबसे सुंदर दिखाई दे। इस मानसिकता के पीछे पुरुषवादी मानसिकता कार्य करती है। अपने आपको अधिक से अधिक सुंदर दिखाकर महिला अपने प्रति हो रहे भेदभाव को मिटाना चाहती है और इसके लिए वह हरसंभव साधन अपनाती है जैसे सौंदर्य प्रसाधन, ब्यूटी पार्लर, प्लास्टिक सर्जरी आदि जो कि पूँजीवाद का एक उभरता हुआ नवीन स्वरूप है।

विभिन्न युगों में परिवर्तित होती सौंदर्य की अवधारणा : समाज में सामाजिक अवसरों त्योहारों, औपचारिक व अनौपचारिक मिलन समारोह, विवाह अवसर, जन्मदिन या अन्य किसी पार्टी आदि अवसरों पर जहाँ लोग सामूहिक रूप से एकत्रित होते हैं, वहाँ प्रत्येक महिला अपनी छवि को सुंदर रूप में प्रस्तुत करना चाहती है। परिजनों एवं समाज के सदस्यों की भी अपेक्षा यही रहती है कि उनके परिवार की महिला सौंदर्य की दृष्टि से आकर्षक एवं स्वस्थ दिखनी चाहिए। समाज में विवाह के लिए एक सुंदर लड़की की माँग अधिक रहती है। एक सुंदर स्त्री प्रत्येक स्थान पर आकर्षण का केंद्र रहती है। सौंदर्यीकरण की अवधारणा नवोदित अवधारणा नहीं है, वरन महिला छवि के साथ जुड़ी हुई एक प्राचीन अवधारणा रही है, जिसके आधार पर समाज में महिला प्रस्थिति प्रभावित का निर्धारण होता है। सौंदर्यीकरण की अवधारणा के साथ जुड़े प्रतिमान स्थिर न होकर परिवर्तित होते रहते हैं। विभिन्न युगों के आधार पर सौंदर्य-प्रतिमानों में आये बदलावों देखा जा सकता है।

शास्त्रीयकाल में महिला-सौंदर्य का पैमाना सुगठित शरीर, सुतवाँ नाक, गौरवर्ण एवं कोमल शरीर था। महिला अपने सौंदर्य को निखारने के लिए प्राकृतिक वस्तुओं एवं संसाधनों को प्रयुक्त करती थी। शास्त्रीय ग्रंथों में नायिका के सौंदर्य को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता था कि नायिका के सौंदर्य से नायक उसकी ओर आकर्षित हो सके। गौरवर्ण को उस समय भी उच्चता का आधार माना जाता था एवं श्यामवर्ण की महिला को समाज एवं परिवार के स्तर पर निम्नस्तर प्राप्त होता था। महिला फूलों, सोने एवं चाँदी के गहने पहनकर, इत्र आदि लगाकर स्वयं को सुंदर एवं आकर्षक दिखाने का प्रयास करती थी, जिससे कि समाज में उसका उच्च स्तर बना रहे।

मुगलकाल में मछली जैसी आँखें, तीखी लंबी नाक, पतले होठ आदि महिला-सौंदर्य के समाज द्वारा निर्धारित प्रतिमान थे। इन प्रतिमानों पर खरा उतरने के लिये तथा महिला स्वयं को

ISSN 0975-735X

सुंदर बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयासरत रहती थी, जिससे वह अपने पुरुष साथी को अपने से जोड़े रख सकने में सफल हो सके। सौंदर्य के प्रतिमानों पर खरा नहीं उतरने की दशा में अपने पुरुष साथी से विलगाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। यह स्थिति एक चुनौती के रूप में प्रत्येक युग में समाज में महिला प्रस्थिति को प्रभावित करती है। इस प्रकार की चुनौतियों से महिलाओं पर एक प्रकार का सामाजिक एवं मानसिक दबाव बनाता है, जिसके कारण महिला अपने सौंदर्य के प्रति बहुत सजग व सचेत रहती है। इस प्रकार की चुनौतीपूर्ण स्थिति समाज में महिला के समक्ष सामाजिक तनाव को उत्पन्न करती है।

भारतीय समाज में महिलाओं को सुंदरता के आधार पर किस प्रकार के सामाजिक व्यवहार, भेदभाव, अपमान व शर्म का सामना करना होता है इसका अध्ययन भी इस पत्र में किया गया है। क्या सुंदरता ही योग्यता का आधार है। आज वैश्वीकरण के दौर में भी महिलाओं के साथ रंग, लंबाई, वजन आदि के आधार पर भेदभाव किया जाना क्या उचित है? इन आधारों पर महिलाओं को रोजगार के कई क्षेत्रों एवं प्रतिस्पर्धाओं से क्यों वंचित रखा जाता है? प्रस्तुत अध्ययन में महिला सौंदर्य एवं सामाजिक दबाव से जुड़े इन प्रश्नों को उठाया गया है।

समाजशास्त्र के प्रारंभिक सिद्धांतकार जैसे इमाईल दुर्खीम, मैक्स वेबर और कार्ल मार्क्स ने शारीरिक सौंदर्य के संदर्भ में अपने विचारों को इंगित किया, लेकिन स्पष्टता से सैद्धांतिकरण नहीं किया गया। उन्होंने भावनात्मक प्रभाव के लिए शरीर के स्वरूपशास्त्र पर प्रकाश डाला। तात्कालिक वर्षों में शरीर के संदर्भ में संशोधित व परावर्तित होते शारीरिक व सामाजिक परिप्रेक्ष्य ने शरीर व शारीरिक भेद के आधार पर समाजशास्त्रीय अध्ययन में रुचि को बढ़ावा दिया है।

सी॰ राईट मिल्स् (1959) का मत है कि समाज में व्यक्ति का जीवन इतिहास व वर्तमान समाज दोनों से प्रभावित होता है। इतिहास व समाज दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं, जिन्हें पृथक नहीं किया जा सकता और न ही दोनों को एक-दूसरे के बिना समझा जा सकता। व्यक्ति इतिहास द्वारा निर्धारित व्यवहार प्रतिमानों से प्रभावित होता है एवं व्यक्तियों की सहभागिता व सामूहिकता से उन निर्धारित प्रतिमानों में परिवर्तन भी करता है, जिसमें स्त्री-सौंदर्य के प्रतिमान भी सम्मिलित हैं।

इमाईल दुर्खीम (1970) के अनुसार समाज द्वारा निर्धारित आदर्शात्मक, सांस्कृतिक और सामाजिक कारक महत्त्वपूर्ण हैं, जिन्हें दुर्खीम ने सामाजिक तथ्य की संज्ञा दी है। ये सामाजिक तथ्य व्यक्ति पर प्रतिबंधात्मक प्रभाव डालते हैं। इसी आधार पर समाज में स्त्री पुरुष से शारीरिक व मानसिक स्वरूपों व व्यवहार से संबंधित मानक व मूल्यों का निर्धारण होता है जिनका पालन समाज के सदस्यों द्वारा किया जाता है। इर्विंग गॉफमैन (1976) ने बताया है कि किस प्रकार शरीर व्यक्ति व समाज के मध्य मध्यस्थता की भूमिका निभाता है और किस प्रकार दिन-प्रतिदिन के जीवन में व्यक्ति को सचेत बनाता है। गॉफमैन के अनुसार शरीर वस्तुतः सामाजिक शक्ति द्वारा बनाया गया या उत्पादित ही नहीं है बल्कि यह समाज में प्रचलित मुहावरे और अशाब्दिक संचार की परंपरावादी स्वरूप के को भी दर्शाते हैं, जो कि निस्संदेह सार्वजनिक रूप से किए जाने वाले व्यवहार के महत्त्वपूर्ण घटक हैं। इनका उपयोग सबसे सरलतम अर्थों में पोशाक, आचरण, गतिविधि और आवाज का स्तर एवं शारीरिक हावभाव जैसे हाथ हिलाना, प्रणाम करना, चेहरे की साज-सज्जा और विस्तृत अवधारणात्मक अभिव्यक्ति भी इसमें सम्मिलित है। इस प्रकार समाज द्वारा निर्धारित प्रतिमान न केवल शारीरिक हाव-भाव व शैली का वर्गीकरण करते हैं वरन् शरीर के प्रदर्शन व प्रबंधन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति अपने-आपको

वर्गीकृत करता है। गॉफमैन के अनुसार समाज में शरीर का दोहरा स्थान होता है। यह वैयक्तिक संपदा है लेकिन इसे समाज द्वारा महत्त्वपूर्ण व अर्थपूर्ण रूप में भी परिभाषित किया जाता है। इन दोनों विशेषताओं से तीसरा अर्थ निकलकर आता है कि शरीर समाज में वैयक्तिक स्तर व सामाजिक पहचान के मध्य एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

फैदरमैन और हॉजर (1984) का मत है कि समाज में महिलाओं का जीवन एवं प्रस्थिति समाज द्वारा निर्धारित सौंदर्य की धारणा द्वारा बहुत अधिक प्रभावित होती है। महिलाएँ अपनी किशोरावस्था से ही अपने रंग-रूप एवं आकर्षक छवि को लेकर सजग हो जाती है। महिलाएँ अपने व्यस्त जीवन में से धन एवं समय का बड़ा भाग अपने आपको आकर्षक रूप में प्रस्तुत करने में खर्च करती हैं। इलेक्ट्रॉनिक व प्रेस मीडिया दोनों ही सौंदर्य-प्रसाधनों और अन्य उत्पादों को बढ़ावा देते हैं। सार्वजनिक रूप से शारीरिक छवि के प्रति चेतना और सौंदर्यीकरण के मध्य संबंध देखा जा सकता है। व्यक्ति की मानसिक क्षमता को शारीरिक छवि एवं क्षमता के साथ में जोड़ दिया जाता है, संबंधित कर दिया जाता है। ब्लैक के (2020) अनुसार महिलाएँ अपने रंगरूप एवं सौंदर्यीकरण के पश्चात् मानसिक रूप से स्वयं को सुदृढ़ महसूस करती है। समाज में महिलाएँ अपने वजन व लंबाई के आधार पर किये जा रहे भेदभाव के कारण शारीरिक एवं मानसिक आधार पर बड़े खतरे में हैं। इस कारण वे स्वयं पर अधिक सौंदर्य-प्रसाधनों का प्रयोग करती हैं। इन प्रसाधनों को प्रयुक्त कर महिलाएँ सार्वजनिक रूप से स्वयं को अधिक सजग व सचेत दर्शाती हैं एवं मानती हैं व इन दोनों के मध्य सहसंबंध को भी मानती हैं।

सौंदर्य : एक सामाजिक चुनौती : सौंदर्यीकरण वह प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति स्वयं को सुंदर बनाये रखने का प्रयास करता है एवं इसके लिये वह प्राकृतिक एवं कृत्रिम संसाधनों एवं वस्तुओं का प्रयोग करता है। सौंदर्य शब्द लैंगिकता के आधार पर भेद नहीं करता, लेकिन पुरुषप्रधान समाज में पुरुषप्रधानता एवं इससे जुड़ी मानसिकता के कारण समाज में पुरुष सौंदर्य के बजाय महिला सौंदर्य को अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है तथा सौंदर्य की इस मानसिकता को समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा प्रारंभ से ही महिलाओं में आंतरीकृत करा दिया जाता है। समाज में महिला सौंदर्य को विशेष माना जाता है। सदियों से महिलाओं की शारीरिक सुंदरता को त्वचा के रंग, नाक-नक्श, लंबाई, वजन आदि कई आयामों एवं मानकों के आधार पर मापा जाता रहा है। बालों का रंग, बालों की लंबाई तथा सुगठित शरीर आदि सुंदरता के सामाजिक मानक रहे हैं। इन मानकों के आधार पर कुछ महिलाएँ लाभप्रद स्थिति को प्राप्त करती हैं, तो वहीं कुछ महिलाएँ शारीरिक रंग रूप के आधार पर उन पदों एवं लाभांशों को प्राप्त करने से वंचित रह जाती हैं या उन वांछित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्हें बहुत अधिक संघर्ष करना पड़ता है। इस संदर्भ में शारीरिक सुंदरता योग्यता एवं गुणों के बजाय अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। गिड्डेंस का मत है कि समाज में उन्हीं लोगों को अधिक अवसरों की उपलब्धता होती है जो शारीरिक आधार पर समाज द्वारा निर्धारित प्रतिमानों के अनुरूप हों। समाज द्वारा निर्धारित शारीरिक प्रतिमानों के विपरीत होने वालों को रोजगार प्राप्त करने में कई प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है व दिन प्रतिदिन के जीवन में अपमान और शर्म का सामना करना होता है।

मिशेल फुको (1976) ने शरीर को न केवल विमर्श द्वारा प्राप्तकर्ता के रूप में देखा, बल्कि इसे विमर्श से बना हुआ भी माना। इस प्रकार के तर्क शरीर को जैविक आधार पर बना हुआ ही नहीं मानते वरन् सामाजिक आधार पर निर्धारित उत्पाद मानते हैं, जो सामाजिक विमर्श

ISSN 0975-735X

से प्रभावित होने वाला एवं प्रयुक्त किया जाने वाला हो सकता है। यह एक त्रासदी है कि समाज में सभी वर्ग एवं आयु की महिलाओं पर सौंदर्य को लेकर एक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में सामाजिक दबाव रहता है। इस दबाव को बढ़ाने में मीडिया की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। महिलाओं पर मीडिया द्वारा शारीरिक आधार पर एक निश्चित आकार में रहने का सामाजिक दबाव बनाया जाता है। गोरे रंग एवं दुबली-पतली आकर्षक महिलाओं की छवि को मीडिया के विभिन्न माध्यमों द्वारा बार-बार दर्शाया जाता है एवं उनकी प्रशंसा कर उन्हें आदर्शात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे कि दिखाये गए उस आदर्श को स्वीकार किया जाए और उन्हें संदर्भित करके महिलाएँ स्वयं के संदर्भ में निर्णय ले सकें और स्वयं को वैसा बनाए रखने की कोशिश करें। गोरे रंग को सौंदर्य का पैमाना माना जाता है, इसी का परिणाम है कि बाजार में गोरेपन को बढ़ाने की क्रीम की लगातार बढ़ोतरी हो रही है।

आधुनिक समाज में महिला की एकदम दुबली-पतली शारीरिक छवि एवं उसके सौंदर्य को मीडिया द्वारा विभिन्न विज्ञापनों, फिल्मों, चित्रों आदि के माध्यम से इस प्रकार दिखाया जाता है कि समाज में उसी छवि को एक आदर्श प्रतिमान के रूप में लोग स्वीकार कर लेते हैं एवं मीडिया द्वारा निर्धारित एवं समाज द्वारा स्वीकृत किये गए उन प्रतिमानों को प्राप्त करने की अपेक्षा करने लगते है। वैश्वीकरण के बहुआयामी संचार के साधनों द्वारा गौरवर्ण एवं दुबले-पतले शरीर को आकर्षक नाक-नक्श को सुंदरता का आधार माना गया है। महिला के शरीर के आकार एवं रंग को आदर्श रूप देने व उसे मजबूत बनाने में विज्ञापन अहम भूमिका निभाते हैं। विज्ञापनों में उत्पाद को बेचने के लिए जिस दुबली-पतली मॉडल को दर्शाया जाता है, इससे महिलाएँ स्वयं की तुलना करती हैं एवं उसी प्रकार की छवि को प्राप्त करने के लिये वे अपने भोजन की आदतों में परिवर्तन लाती हैं, जो भोजन की मात्रा को सीमित करता है और भोजन के प्रकार को भी वर्गीकृत करता है। पिछले कुछ दशकों से महिलाओं में विशिष्ट रूप से युवा महिलाओं में डाइटिंग की प्रवृत्ति में बढ़ोतरी हो रही है। डाइटिंग के माध्यम से महिलाएँ अपने खाने की आदतों को नियंत्रित करती है जिसमें भोजन की मात्रा और प्रकार से संबंधित प्रतिबंध भी सम्मिलित हैं। डाइटिंग की संस्कृति में फार्मास्टिकल कॉस्मेटिक और फैशन प्रयोगों से प्रभावित महिलाएँ कम उम्र में ही अपने वजन को नियंत्रित करना शुरू कर देती हैं। वर्तमान में एक नवीन अवधारणा 'माइंड फुल बॉडी' की ओर विकसित हो रही है, जो शारीरिक सौंदर्य के साथ बुद्धिमत्ता को भी महत्त्वपूर्ण मानती है। अत: आधुनिकता से विकास के साथ सामाजिक विमर्श में भी परिवर्तन आया है।

अति आधुनिक और विकसित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों पर साज-सज्जा व अच्छा दिखने का दबाव अधिक होता है, बजाय उनके जो कम विकसित व कम आधुनिकीकृत क्षेत्रों में रहते हैं। अधिकांश भारतीय महिलाओं को सुसज्जित व शृंगार के साथ रहना उन्हें अच्छा लगता है। यहाँ प्रश्न उठता है कि हमेशा सौंदर्यपूर्ण तरीके से रहना महिला की स्वयं की पसंद है या सामाजिक दबाव है। सौंदर्यीकरण प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में सामाजिक दबाव के रूप में भी कार्य करता है। कुछ महिलाएँ समाज, परिवार, पति या पुरुष मित्रों के दबाव में आने के कारण स्वयं के सौंदर्य के प्रति सजग रहती हैं। समाज में अविवाहित युवा लड़कियों के ऊपर समाज एवं परिवार का दबाव रहता है कि वह सुंदर दिखें जिससे उनके विवाह के लिए कोई समस्या न आए। वर्तमान में बढ़ते पूँजीवाद ने स्थानीय स्तर, राष्ट्रीय स्तर व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सौंदर्य प्रतियोगिताओं के प्रचलन को बढ़ावा दिया है, जिसके प्रभाव को समाज पर भी प्रत्यक्ष रूप में देखा जा सकता

है विशिष्ट रूप से महिलाओं पर कि वे अपने गुड लुकिंग को लेकर बहुत सजग रहती हैं। पूँजीवादी संस्कृति ने समाज में सौंदर्यीकरण की प्रतिस्पर्धा द्वारा सौंदर्यीकरण के बाजार को एक नयी दिशा व आयाम प्रदान किया है, जिससे सौंदर्यीकरण के बाजार में नई अवधारणा (ब्यूटी पार्लर की अवधारणा) और जुड़ गई है।

पूँजीवादी एवं उपभोगवादी संस्कृति के दबाव के कारण महिलाएँ अपने सौंदर्य को लेकर अधिक सचेत व सजग हो रही हैं। लेकिन कुछ महिलाएँ जिन्हें सादगी से रहना पसंद है और जो पार्लर नहीं जातीं, सामाजिक दबाव के कारण पॉर्लर जाने को मजबूर हो जाती है, क्योंकि यह एक सामाजिक प्रस्थिति का स्वरूप बनकर उभर रहा है। महिलाओं का मत है कि सुंदरता को हमेशा दूसरों द्वारा पसंद किया जाता है अत: वे सुंदर दिखना चाहती हैं। सौंदर्य से उनके सामने कई अवसर खुल जाते हैं। ये रोजगार के अवसर हो सकते हैं वहीं अन्य लाभों के अवसर भी उन्हें प्राप्त हो जाता हैं एवं सामाजिक प्रस्थिति भी उच्च हो जाती है। अत: समाज में सौंदर्यीकरण विशिष्ट रूप से महिलाओं के संदर्भ में सामाजिक दबाव के रूप में कार्य करता है। इस अवधारणा ने महिलाओं की पूरी जीवन-पद्धति को ही परिवर्तित कर दिया है। प्राकृतिक सौंदर्य सभी द्वारा पसंद किया जाता है लेकिन उस सौंदर्य को निरंतर बनाए रखने का दबाव सामाजिक व मनोवैज्ञानिक हो सकता है।

निष्कर्ष : सौंदर्य नैसर्गिक भावना व अवधारणा है, जिसमें मानवीय हस्तक्षेप, आकांक्षा व महत्त्वाकांक्षा ने परिवर्तित कर उसे कृत्रिमता के साथ जोड़ दिया है। समाज में सौंदर्य को विशिष्ट रूप से महिलाओं के साथ जोड़कर देखा जाता है। सौंदर्य सामाजिक दबाव का कार्य करता है, जिसके कारण महिलाओं के समक्ष कई प्रकार की चुनौतियाँ उभरकर आती हैं। इन सामाजिक व मानसिक चुनौतियों के कारण महिलाएँ मानसिक व भावनात्मक समस्याओं का सामना करने को मजबूर होती हैं। महिलाएँ मानती हैं कि सौंदर्य के कारण रोजगार के अवसरों के द्वार उनके लिये खुल सकते हैं या वे वंचित भी हो सकती हैं। यह वंचना तनाव का कारण बन जाता है। भारतीय समाज में महिला सौंदर्य के संदर्भ में वैचारिक स्तर पर परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। सौंदर्य के बजाय योग्यता व गुणों को अवसरों की उपलब्धता का आधार माना जाये।

संदर्भ

1. Baumann, S. (2008). The moral underpinnings of beauty: A meaning-based explanation for light and dark complexions in advertising. University of Toronto, 2-23.
2. Black, P. & Sharma, U. (2001). Men are real, Women are, made up : beauty therapy and the construction of femininity. The Sociological Review, 100-116.
3. Black.K.R.et.al (2020). On Attenuated Interactions, Measurement Error, and Statistical Power: Guidelines for Social and Personality Psychologists. Personality& Social Psychology Bulletin, Sage Publication.
4. Featherman, David L. and Robert M. Hauser (1978). Opportunity and Change. New York: Academic press.
5. Foucault, Michel (1976). The History of Sexuality. Éditions Gallimard, Paris.
6. Giddens, A, (2001). Sociology: Blackwell publishers.
7. Goffman, Erving (1976). Gender Advertisement. Palgrave Macmillan, London.
8. Mills, C. Wright (1959). The Sociological Imagination. Oxford University Press, UK

sumitrsaarma1974@gmail.com
मो॰ 9982612656

ISSN 0975-735X